संगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के सामाजिक जीवन का अध्ययन

*मेनका यादव एवं **डॉ0 सूर्यभान रावत
* शोधछात्रा– समाजशास्त्र एवं ** शोध पर्यवेक्षक
किसान पी0जी0 कालेज, बहराइच

प्राचीन काल में मानव के साधन तथा आवश्यकताएँ सीमित होने के कारण उसका घर चलाने का अपना अलग ढंग था, जो कि सुविधामय तथा सीमित था। जैसे–जैसे सभ्यता का विकास होता गया वैसे–वैसे परिवार की आवश्यकताओं में वृद्धि होती गई। साथ ही लक्ष्यों की संख्या की वृद्धि भी होती चली गई। सभी लक्ष्यों की पूर्ति साधनों की सीमितता के कारण सम्भव नहीं था। अतः सोच विचार एवं तर्क–विर्तक के माध्यम से आवश्यकता और लक्ष्यों का चयन करना नितान्त आवश्यक हो गया। आधुनिक युग में सभ्यता चरम सीमा पर पहुँच गई, जिसकी झलक घर की व्यवस्था पर दिखाई देने लगी। जीवन की जटिलताएँ और हो रहें परिवर्तनों के कारण यातायात के साधन तथा सुविधाओं के बढ़ने से अब घर से बाहर के कार्य भी बढ़ गए है। जैसे व्यापार करना नौकरी करना आदि।

फलस्वरूप दैनिक जीवन पद्धति में परिवर्तन आने के कारण पारिवारिक जीवन की स्थिति बदल गई। शनैः शनैः परिवार की स्वरूप तथा प्रतिरूपों में व्यापक अन्तर होता गया। तथा कार्य प्रणाली में जटिलताएँ भी आती गई। यह भी स्पष्ट है कि संयुक्त परिवार टूटने के कारण एकल परिवार की परिकल्पना की भावना दिनानुदिन विकसित होती गई। इन परिवर्तन के कारण प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष प्रभाव परिवार के क्रिया–कलापों पर पड़ना भी प्रारम्भ हो गया। इसका नतीजा यह हुआ कि पारिवारिक मूल्यों तथा लक्ष्यों की धारणाएँ बदलती गई। अब तक गृह–व्यवस्था का ढंग बदल गया। क्योंकि इसका क्षेत्र घर की चारदीवारी में सीमित नहीं रहा अपितु घर के बाहर का दायरा भी विकेन्द्रित होता चला गया। तदानुसार उनका सामाजिक स्तर बढ़ा और वे कार्यरत भी होने लगी।

किसी भी विषय का अध्ययन पूर्व तथा आज के सामाजिक परिवेश में रहकर ही किया जा सकता है। एक राष्ट्र एवं समाज के लिए सबसे महत्वपूर्ण संसाधन मानव ही है। कोई भी राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता है। जिसके पास साधन रूपी मानव नहीं हो। व्यक्ति समाज की कल्पना करता है, इसी सामाजिक परिकल्पनाओं के आधार पर मानव संसाधनों की श्रृंखला बनाता और बिगाड़ता है।

यह भी स्पष्ट है कि कोई भी राष्ट्र महिलाओं के बिना उन्नति के शिखर पर पहुँच ही नहीं सकता हैं। यो कहें महिलाएँ राष्ट्र की नेत्री तथा निर्माता भी है। सदियों से समाज तथा राष्ट्र की भौतिक एवं नैतिक प्रगति महिलाओं के हाथों से संलग्न रहता है। परिवार ही अपने सदस्यों की शारीरिक, संवेगात्मक तथा अध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी करता है। जीवन का अर्थ प्रदान करना महिलाओं का ही प्रमुख लक्ष्य है इस बात की पुष्टि प्राचीन इतिहास से भी होती है।

भारतीय संस्कृति के गृह निर्माण में गृहिणी की कला का केन्द्र मानी जाती है। परिवार में 64 कलाओं में प्रवीण तथा प्रशिक्षित होकर ये अपने परिवार तथा समाज का निर्माण सुचारू रूप से करती है। महिलाएँ इस प्रकार भविष्य की परिकल्पना करती है और इसी परिकल्पना एवं कल्पना के सहारे भावी जीवन की तैयारी भी करती है ये किसी की पत्नी तथा बहन बनकर परिवार को सुशोभित करती है साथ ही परिवार की आधारशिलाओं को केन्द्रित भी करती रहती है। भारतीय संस्कृति में महिलाओं का सर्वोत्तम स्थान माना जाता है।

आजादी के बाद कालान्तर महिलाओं का उत्तरोत्तर विकास होता जा रहा है। वस्तुतः विकास एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। वह निरन्तर चलता रहेगा। इसी गति शीलता के कारण जो महिलाओं में परिवर्तन आया है। जो इस प्रकार यहाँ केन्द्रित है।

(1) शिक्षा में विकास

(2) वैवाहिक तथा पारिवारिक अधिकारों की वृद्धि

(3) आर्थिक स्थिति में सुधार

(4) सामाजिक जागरूकता में अभिवृद्धि

(5) राजनीतिक जीवन के समानता में अभिवृद्धि रूप से आती है। वस्तुत इन्हीं कारणों से समाज में नयी क्रांति भी आयी। महिलाओं की सोच और दिशा बदलती जा रही है। सामाजिक गतिशीलता के कारण महिलाओं में नयी चेतना आयी। कालान्तर में ये महिलाएँ अपने अधिकार और कर्तव्यों से भली–भाँति परिचित होती चली गई। आज के बदलते परिवेश में समय की तेज तथा अपरिमेय धारा ने महिलाओं को गृह से बाहर निकलने के लिए मजबूर कर दिया है। कुछ बनने, कुछ कर दिखाने की लालसा और जिज्ञासा पैदा होती गई है। इसका कारण यह है कि एक और आर्थिक आवश्यकता, वही दूसरी ओर व्यक्तित्व विकास और आत्मनिर्भरता होने की ललक और लालसा परिलक्षित दीख पड़ती हैं। जीवन और विवाह बन्धन तथा इससे सम्बंधित विचारधाराओं का क्रांतिकारी रूप से परिवर्तित दिखता नजर आ रहा है। इस का प्रमुख उदाहरण बड़े–बड़े महानगरों की वे अविवाहित युवतियों जो विवाह बन्धन के अस्तित्व को नकार चुकी है, और पुरूषों के बिना अपना जीवन–यापन आनन्दपूर्ण करने की मंशा भी रख रही हैं यहाँ तक विवाह के पहले यौन सम्बन्धों को बुरा नहीं मानती। आज की महिलाएँ गृह–व्यवस्था से लेकर सामाजिक व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था धार्मिक व्यवस्था, स्वास्थ्य व्यवस्था, सामुदायिक विकास, बाल विकास आदि व्यवस्था के प्रति जागृत होती दीख रही है। सम्पूर्ण व्यवस्था में आज की नारी आमूल परिवर्तन चाहती है। इसलिए नारी संगठनों के माध्यम से अपने अधिकारों की माँग कर रही है।

संगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला–

संगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला शब्द का प्रयोग प्रायः नौकरी करने वाली महिला के संदर्भ में किया जाता है, अर्थात् वे महिलाएँ जो घरों के बाहर नियमित रूप से आर्थिक या व्यवसायिक गतिविधियों में व्यस्त रहती है काम, श्रम करने वाले, स्वयं श्रम करना ही नहीं, वरन् दूसरे व्यक्तियों से काम लेना तथा उनके कार्य की निगरानी करना एवं निर्देशन आदि देना भी सम्मिलित है। आज के भौतिकवादी परिवेश हर महिला का श्रमजीवी होना एक अनिवार्यता बन गयी है। घर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये पति और पत्नी दोनों का ही कार्य करना आवश्यक हो गया है जिससे पत्नी की परम्पागत प्रस्थिति एवं भूमिका में परिवर्तन आये है। घर के बाहर काम करने के कारण पत्नी को घर और बहार दोनों ही क्षेत्रों की भूमिकाओं का निर्वहन करना पड़ता है। जिससे कभी–कभी ऐसी स्थिति भी आती है कि दोनों भूमिकाओं में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

इस प्रकार हम देखते है कि श्रम (पेशे) का परिवार के निर्माण पर परिवार की संरचना पर, परिवार की भूमिका पर और परिवार के विघटन पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि जो महिलाओं में नौकरी करने की लहर आयी है, उसका प्रभाव उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर तथा पारिवारिक संबंधों पर पड़ता है। अब उसे एक तरफ गृहणी, पत्नी माँ और दूसरी तरफ जीविकोपार्जन दोनों की भूमिका निभानी पड़ती है। इस तरह दोहरी भूमिका को निभाने में उसकी शक्ति और समय दोनों खर्च होता है और इसका परिणाम यह होता है कि पारिवारिक संबंधों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गृह कार्य के लिये समय का अभाव होता है। एक ही समय में घर की व्यवस्था करना और नौकरी पर जाने की तैयारी करना आसानी से सम्भव नहीं है। महिलाएँ अपने पति को स्वामी न

मान कर एक मित्र की भाँति मानने की भावना इन महिलाओं में परिलक्षित होती है। इस कारण संगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के दाम्पत्य जीवन के साथ ही परिवारों में तनाव की स्थिति प्रारंभ हो जाती है। पति श्रेष्ठ है तथा पत्नी उसके आधीन है, यह भावना आ जाती है जिसने इस भावना के आगे अपने को सम्पूर्ण समर्पण कर दिया वह परिवार में समायोजित हो जाती है। पति–पत्नी को एक दूसरे को समझना सुखमय दाम्पत्य जीवन का रहस्य है। पति पत्नी में आपसी समझ बूझ के अभाव में व्यक्तित्व मान्यताओं को प्रथम स्थान देते हैं।

अतः इससे एक दूसरे को सहयोग देने की बात ही नहीं उठती है, घर और बाहर भी जिम्मेदारियों को एक साथ ढोना संगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के लिये असम्भव है, इस अवधि में वह पति से सहयोग की अपेक्षा रखती है, यदि पति अपने पत्नी के अपेक्षा पर खरा उतरता है तो, वो महिला अपनी दोहरी जिम्मेदारियों का कुशलतापूर्वक निर्वहन कर सकती है। यदि पति अपनी पत्नी का सहयोग नहीं करता है तो परिवार में तनाव सुनिश्चित है।

निष्कर्ष–

कामकाजी महिलाओं की कार्य क्षमता तथा कार्य करने की शक्ति अच्छा स्वास्थ्य तथा वातावरण पर निर्भर करता है। क्योंकि महिलाएं गृह–व्यवस्था को व्यवस्थित कर नौकरी पर जाती है। अतः यह आवश्यक हैं कि नौकरी करने वाली महिलाओं का स्वास्थ्य उत्तम रहे। उत्तम स्वास्थ्य के लिए नियमानुसार पोषण तथा संतुलित भोजन भी होना चाहिए। क्योंकि भाग–दौड़ में शक्ति का ह्रास होता जाता है। रहन–सहन, संतुलित भोजन आर्थिक आधार तय किया जाता है। मध्यवर्गीय तथा निम्न वर्गीय परिवारों में रहन–सहन, खान–पान का स्तर भिन्न–भिन्न होता हैं। यह भी स्पष्ट हैं कि परिवार के वातावरण तथा परिवार की स्थिति पर ही कामकाजी महिलाओं की नौकरी निर्भर करती हैं, उपेक्षित परिवार की महिलाएँ जब कार्य करने जाती हैं तो उनका मन बोझिल बना रहता है।

कामकाजी महिलाओं की समाजीकरण की प्रक्रिया का एक लम्बा और श्रृंखलाबद्ध इतिहास हैं। आज जो महिलाएँ नौकरी कर रही हैं, कई प्रकार की दूरियों को तय कर समाज तथा परिवार में हिस्सेदारी दे रही है। फलस्वरूप समाज भी महिलाओं की स्वीकृति तथा चुनौती को स्वीकार करने लगा। वर्ग तथा जातियों के आधार पर नौकरियां आरक्षित है। यह भी स्पष्ट है कि एक सामाजिक वर्ग की मौलिक विशेषता अन्य सामाजिक वर्गों की तुलना में उच्च तथा निम्न श्रेणी में दृष्टिगोचर होता है। नगर में भी उच्च और निम्न महिलाओं में काफी मतभेद हैं। सर्वेक्षण करते समय ज्ञात हुआ हैं कि यहाँ की महिलाएँ भी उच्च और निम्न वर्ग अर्थ के दृष्टिकोण से ही प्रभावित हो रहा है।

संदर्भ

[1] डॉ. एम. एन. शर्मा विकास एवं परिवर्तन का समाजशास्त्र, राजीव प्रकाशन लालकुर्ती मेरठ, पृ. क्र. 102।

[1] मानचन्द्र खंडेला, महिला सशक्तिकरण सिद्धांत एवं व्यवहार, आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर, पृष्ठ क्र. 100, 101, 102, 103।

[1] डॉ. सुभाषचन्द्र गुप्ता, कार्यशील महिलाएँ एवं भारतीय समाज, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, पृष्ठ क्र. 198–199.

[1] डॉ0 वीरेन्द्र सिंह यादव, 21वीं सदी का महिला सशक्तिकरण, मिथक एवं यथार्थ, ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली, पृष्ठ क्र. 65।